खोया हुआ मोती

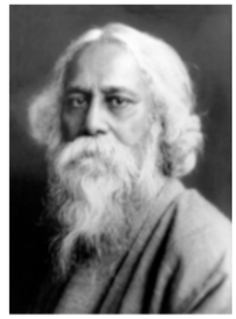

रविंद्रनाथ टैगोर

खोया हुआ मोती

मेरी नौका ने स्नान-घाट की टूटी-फूटी सीढ़ियों के समीप लंगर डाला। सूर्यास्त हो चुका था। नाविक नौका के तख्ते पर ही मगरिब (सूर्यास्त) की नमाज अदा करने लगा। प्रत्येक सजदे के पश्चात् उसकी काली छाया सिंदूरी आकाश के नीचे एक चमक के समान खिंच जाती।

https://www.hindiadda.com/khoya-hua-motee/

नदी के किनारे एक जीर्ण-शीर्ण इमारत खड़ी थी, जिसका छज्जा इस प्रकार झुका हुआ था कि उसके गिर पड़ने की हर घड़ी भारी शंका रहती थी। उसके द्वारों और खिड़कियों के किवाड़ बहुत पुराने और ढीले हो चुके थे। चहुं ओर शून्यता छाई हुई थी। उस शून्य वातावरण में सहसा एक मनुष्य की आवाज मेरे कानों में सुनाई पड़ी और मैं कांप उठा।

"आप कहां से आ रहे हैं?"

मैंने गर्दन घुमाकर देखा तो एक पीले, लम्बे और वृध्द मनुष्य की शक्ल दिखाई पड़ी जिसकी हड्डियां निकली हुई थीं, दुर्भाग्य के लक्षण सिर से पैर तक प्रकट हो रहे थे। वह मुझसे दो-चार सीढ़ियां ऊपर खड़ा था। सिल्क का मैला कोट और उसके नीचे एक मैली-सी धोती बांधे हुए। उसका निर्बल शरीर, उतरा हुआ मुख और लड़खड़ाते हुए कदम बता रहे थे कि उस क्षुधा-पीड़ित मनुष्य को शुध्द वायु से अधिक भोजन की आवश्यकता है।

"मैं रांची से आ रहा हूं।'

यह सुनकर वह मेरे बराबर उसी सीढ़ी पर आ बैठा।

"और आपका काम?"

"व्यापार करता हूं।"

"काहे का?"

"इमारती लकड़ी, रेशम और त्रिफला का।"

"आपका नाम क्या है?"

एक क्षण सोने के बाद मैंने उसे अपना एक बनावटी नाम बता दिया। किन्तु वह अब मुझे एक-टक देख रहा था।

'परन्तु आपका यहां आना कैसे हुआ? केवल मनोरंजन के लिए या वायु-परिवर्तन के लिए?"

मैंने कहा-"वायु-परिवर्तन के लिए।'

"यह भी खूब कही। मैं लगभग छः वर्ष से प्रतिदिन यहां की ताजी वायु पेट भरकर खा रहा हूं और साथ ही पन्द्रह ग्रेन कुनैन भी; परन्तु अन्तर कुछ नहीं हुआ। कोई लाभ दिखाई नहीं देता।"

"किन्तु रांची और यहां के जलवायु में तो पृथ्वी और आकाश का अन्तर है।"

"इसमें सन्देह नहीं, किन्तु आप यहां ठहरे किस स्थान पर हैं? क्या इसी मकान में?"

सम्भवत: उस व्यक्ति को संदेह हो गया था कि मुझे उसके किसी गड़े हुए धन का कहीं से सुराग मिल गया है और मैं उस स्थान पर ठहरने के लिए नहीं; बल्कि उसके गड़े हुए धन पर अपना अधिकार जमाने आया हूं। मकान की भलाई-बुराई के सम्बन्ध में एक शब्द तक कहे बिना उसने अपने उस मकान के स्वामी की पन्द्रह साल पूर्व की एक कथा सुनानी आरम्भ कर दी-

"उसकी गंजी खोपड़ी में गहरी और चमकदार काली आंखें मुझे कॉलरिज के पुराने नाविक का स्मरण करा रही थीं। वह एक स्थानीय स्कूल में अध्यापक था।

"नाविक ने समाज से निवृत्त होकर रोटी बनानी आरम्भ कर दी। सूर्यास्त होने के समय आकाश के सिंदूरी रंग पर अधिकार जमाने वाली अंधेरी में वह खण्डहर- भवन एक विचित्र-सा भयावह दृश्य प्रदर्शित कर रहा था।

"मेरे पास सीढ़ी पर बैठे हुए उस दुबले और लम्बे स्कूल मास्टर ने कहा- "मेरे इस गांव में आने से लगभग दस साल पूर्व एक व्यक्ति फणीभूषण सहाय इस मकान में रहता था। उसका चाचा दुर्गामोहन बिना अपने किसी उत्तराधिकारी के मर गया। जिसकी सम्पूर्ण संपत्ति और विस्तृत व्यापार का अकेला वही अधिकारी था।

"पाश्चात्य शिक्षा और नई सभ्यता का भूत फणीभूषण पर सवार था। कॉलेज में कई वर्षों तक शिक्षा प्राप्त कर चुका था। वह अंग्रेजों की भांति कोठी में जूता पहने फिरा करता था, यह कहने की आवश्यकता नहीं कि ये लोग उनके साथ कोई व्यापारिक रियायत देने के रवादार न थे। वे भली-भांति जानते थे कि फणीभूषण आखिर को नए बंगाल की वायु में सांस ले रहा है।

"इसके अतिरिक्त एक और बला उसके सिर पर सवार थी। अर्थात् उसकी पत्नी परम सुन्दरी थी। यह सुन्दर बला और पाश्चात्य शिक्षा दोनों उसके पीछे ऐसी पड़ी थीं कि

तोबा भली! खर्च सीमा से बाहर। तनिक शरीर गर्म हुआ और झट सरकारी डॉक्टर खट-खट करते आ पहुँचे।

"विवाह सम्भवत: आपका भी हो चुका है। आपको भी वास्तव में यह अनुभव हो गया है कि स्त्री कठोर स्वभाव वाले पति को सर्वदा पसन्द करती है। वह अभागा व्यक्ति जो अपनी पत्नी के प्रेम से वंचित हो, यह न समझ बैठे कि वह इस संपत्ति से माला-माल नहीं या सौन्दर्य से वंचित है। विश्वास कीजिये वह अपनी सीमा से अधिक कोमल प्रकृति और प्रेम के कारण इसी दुर्भाग्य में फंसा हुआ है। मैंने इस विषय में खूब सोचा है और इस तथ्य पर पहुंचा हूं और यह है भी ठीक। पूछिये क्यों? लीजिये इस प्रश्न का संक्षिप्त और विस्तृत उत्तर इस प्रकार है।

"यह तो आप अवश्य मानेंगे कि कोई भी व्यक्ति उस समय तक वास्तविक प्रसन्नता प्राप्त नहीं कर सकता, जब तक कि उसे अपने जन्मजात विचार और स्वाभाविक योग्यताओं के प्रकट करने के लिए एक विस्तृत क्षेत्र प्राप्त न हो। हरिण को आपने देखा है वह अपने सींगों को वृक्ष से रगड़कर आनन्द प्राप्त करता है, नर्म और नाजुक केले के खम्भे से नहीं। सृष्टि के आरम्भ से ही नारी-जाति इस जंगली और कठोर-स्वभाव पुरुष को जीतने के लिए विशेष ढंग सीखती चली आ रही है। यदि उसे पहले ही से आज्ञाकारी पति मिल जाये तो उसके वे आकर्षक हथकंडे जो उसको मां और दादियों से बपौती रूप में मिले हैं, और लम्बे समय से निरन्तर चलते रहने के कारण सीमा से अधिक सत्य भी सिध्द हुए हैं, न केवल बेकार रह जाते हैं बल्कि स्त्री को भार-स्वरूप मालूम होने लगते हैं।

"स्त्री अपने आकर्षक सौन्दर्य के बल पर पुरुष का प्रेम और उसकी आज्ञाकारिता प्राप्त करना चाहती है। किन्तु जो पति स्वयं ही उनके सौन्दर्य के सामने झुक जाये, वह वास्तव में दुर्भाग्यशाली होता है, और उससे अधिक उसकी पत्नी।

"वर्तमान सभ्यता ने ईश्वर-प्रदत्त उपहार अर्थात् "पुरुष की सुन्दर कठोरता' उससे छीन ली है। पुरुष ने अपनी निर्बलता से स्त्री के दाम्पत्य-बन्धन को बड़ी सीमा तक ढीला कर दिया है। मेरी इस कहानी का अभागा फणीभूषण भी इस नवीन सभ्यता की छलना से छला हुआ था और यही कारण था कि न वह अपने व्यापार में सफल था और न गृहस्थ जीवन से सन्तुष्ट। यदि एक ओर वह अपने व्यापार में लाभ से बेखबर था तो दूसरी ओर अपनी पत्नी के पतित्व-अधिकार से वंचित।

"फणीभूषण की पत्नी मनीमलिका को प्रेम और विलास-सामग्री बेमांगे मिली थी। उसे सुन्दर और बहुमूल्य साड़ियों के लिए अनुनय-विनय तो क्या पति से कहने की आवश्यकता न होती थी। सोने के आभूषणों के लिए उसे झुकना न पड़ता था। इसलिए उसके स्त्रियोचित स्वभाव को आज्ञा देने वाले स्वर का जीवन में कभी आभास न हुआ था, यही कारण था कि वह अपनी प्रेममयी भावनाओं में आवेश की स्थिति उत्पन्न न कर पाती थी। उसके कान-"लो स्वीकार करो' के मधुर शब्दों से परिचित थे; किन्तु उसके होंठ 'लाओ' और 'दो' से सर्वथा अपरिचित। उसके सीधे स्वभाव का पति इस मिथ्या-भावना की कहावत से प्रसन्न था कि 'कर्म किये जाओ फल की कामना मत करो, तुम्हारा परिश्रम कभी अकारथ नहीं जाएगा'। वह इसी मिथ्या भावना के पीछे हाथ-पैर मारे जा रहा था। परिणाम यह हुआ कि उसकी पत्नी उसे ऐसी मशीन समझने लगी जो बिना चलाए चलती है। स्वयं ही बिना कुछ कष्ट किये सुन्दर साड़ियां और बहुमूल्य आभूषण बनाकर उसके कदमों पर डालती रहती। उसके पुर्जे इतने शक्तिशाली और टिकाऊ थे कि कभी भी उसको तेल देने की आवश्यकता न होती।

"फणीभूषण की जन्मभूमि और रहने का स्थान समीप ही एक देहात का गांव था, किन्तु उसके चाचा के व्यापार का मुख्य स्थान यही शहर था। इसी कारण उसकी आयु का अधिक भाग यहीं व्यतीत हुआ था। वैसे मां मर चुकी थी; किन्तु मौसी और मामियां आदि ईश्वर की कृपा से विद्यमान थीं। परन्तु वह विवाह के बाद ही फौरन मनीमलिका को अपने साथ ले आया। उसने विवाह अपने सुख के लिए किया था न कि अपने सम्बन्धियों की सेवा के लिए।

"पत्नी और उसके अधिकारों में पृथ्वी-आकाश का अन्तर है। पत्नी को प्राप्त कर लेना और फिर उसकी देख-भाल करना, उसको अपना बनाने के लिए काफी नहीं हुआ करता।

"मनीमलिका सोसायटी की अधिक भक्त न थी। इसलिए व्यर्थ का खर्च भी न करती थी, बल्कि इसके प्रतिकूल बड़ी सावधानी रखने वाली थी। जो उपहार फणीभूषण उसको एक बार ला देता फिर क्या मजाल कि उसको हवा भी लग जाए। वह सावधानी से सब रख दिया जाता। कभी ऐसा नहीं देखा गया कि किसी पड़ोसिन को उसने भोजन पर बुलाया हो। वह उपहार या भेंट लेने-देने के पक्ष में भी न थी।

"सबसे अधिक आश्चर्य की बात यह थी कि चौबीस साल की आयु में भी मनीमलिका चौदह वर्ष की सुन्दर युवती दिखाई देती थी। ऐसा प्रतीत होता मानो उसका

रूप-लावण्य केवल स्थायी ही नहीं, बल्कि चिरस्थायी रहने वाला है। मनीमलिका के पार्श्व में हृदय न था बर्फ का टुकड़ा था, जिस पर प्रेम की तनिक भी तपन न पहुंची थी। फिर वह पिघलता क्यों और उसका यौवन ढलता किस प्रकार?

"जो वृक्ष पत्तों से लदा होता है प्राय: फल से वंचित रहता है। मनीमलिका का सौन्दर्य भी फलहीन था। वह संतानहीन थी। रख-रखाव और व्यक्तिगत देख-रेख करती भी तो काहे की? उसका सारा ध्यान अपने आभूषणों पर ही केन्द्रित था। संतान होती तो वसन्त की मीठी-मीठी धूप की भांति उसके बर्फ के हृदय को पिघलाती और वह निर्मल जल उसके दाम्पत्य-जीवन के मुरझाए हुए वृक्ष को हरा कर देता।

"मनीमलिका गृहस्थ के काम-काज और परिश्रम से भी न कतराती थी। जो काम वह स्वयं कर सकती उसका पारिश्रमिक देना उसे खलता था। दूसरों के कष्ट का न उसे ध्यान था और न नाते-रिश्तेदारों की चिन्ता। उसको अपने काम से काम था। इस शांत जीवन के कारण वह स्वस्थ और सुखी थी। न कभी चिन्ता होती थी, न कोई कष्ट।

'प्राय: पति इसे सन्तोष तो क्या सौभाग्य समझेंगे? क्योंकि जो पत्नी हर समय फरमाइशें लेकर पति की छाती पर चढ़ती रहे वह सारे गृहस्थ के लिए एक रोग सिध्द होती है।

"कम-से-कम मेरी तो यही सम्मति है कि सीमा से बढ़ा हुआ प्रेम पत्नी के लिए सम्भवत: गौरव की बात हो, किन्तु पति के लिए एक विपत्ति से कम सोचिए तो सही कि क्या पुरुष का यही काम रह गया है कि वह हर समय यही तोलता-जोखता रहे कि उसकी पत्नी उसे कितना चाहती है, मेरा तो यह दृष्टिकोण है कि गृहस्थ का जीवन उस समय अच्छा व्यतीत होता है जब पति अपना काम करे और पत्नी अपना।

"स्त्री का सौन्दर्य और प्रेम यानी तिरिया-चरित्र पुरुष की बुध्दि से परे की चीज है, किन्तु स्त्री-पुरुष के प्रेम के उतार-चढ़ाव और उसके न्यूनाधिक अन्तर को गम्भीर दृष्टि से देखती रहती है। वह शब्दों के लहजे और छिपी हुई बात के अर्थ को झट अलग कर लेती है। इसका कारण केवल यह है कि जीवन के व्यापार में स्त्री की पूंजी लेकर केवल पुरुष का प्रेम है। यही उनके जीवन का एकमात्र सहारा है। यदि वह पुरुष की रुचि के वायु के प्रवाह को अपनी जीवन-नैया के वितान से स्पर्श करने में सफल हो जाए तो विश्वस्ततः नैया अभिप्राय के तट तक पहुंच जाती है। इसीलिए प्रेम का कल्पना-यन्त्र पुरुष के हृदय में नहीं, स्त्री के हृदय में लगाया गया है।

"प्रकृति ने पुरुष और स्त्री की रुचि में स्पष्ट रूप से अन्तर रखा है, किन्तु पाश्चात्य सभ्यता इस स्त्री-पुरुष के अन्तर को मिटा देने पर तुली हुई है। स्त्री पुरुष बनी जा रही है और पुरुष स्त्री। स्त्री-पुरुष के चरित्र तथा उसके कार्य-क्षेत्र को अपने जीवन की पूंजी और पुरुष स्त्रियोचित चरित्र तथा नारी-कर्म-क्षेत्र को अपने जीवन का आनन्द समझने लगे हैं। इसलिए यह कठिन हो गया है कि विवाह के समय कोई यह कह सके कि वधू स्त्री है या स्त्रीनुमा स्त्री पुरुष। इसी प्रकार स्त्री अनुमान लगा सकती है कि जिसके पल्ले वह बंध रही है वह पुरुष है या पुरुषनुमा स्त्री। इसलिए कि अन्तर केवल हृदय का है। पर क्या जाने कि पुरुष का हृदय मरदाना है या जनाना?

"मैं बहुत देर से आपको शुष्क बातें सुना रहा हूं, परन्तु किसी सीमा तक क्षमा के योग्य भी हूं। मैं अपनों से दूर निर्वासित जीवन व्यतीत कर रहा हूं। मेरी दशा उस तमाशा देखने वाले दर्शक के समान है जो दूर से गृहस्थ-जीवन का तमाशा देख रहा हो और वह उसके गुणों से लाभ उठाकर केवल उसके लिए कुछ सोच सकता हो। इसीलिए दाम्पत्य-जीवन पर मेरे विचार अत्यन्त गम्भीर हैं। मैं अपने शिष्यों के सम्मुख तो वह विचार प्रकट कर नहीं सकता, इसी कारण आपके सामने प्रकट करके अपने हृदय को हल्का कर रहा हूं। आप अवकाश के समय इन पर विचार करें।

"सारांश यह है कि यद्यपि गृहस्थ-जीवन में प्रकट रूप में कोई कष्ट फणीभूषण को न था। समय पर भोजन मिल जाता, घर का प्रबन्ध सुचारु रूप से चल रहा था, किन्तु फिर भी एक प्रकार की विकलता और अविश्वास उसके हृदय में समाया हुआ था और वह नहीं समझ पाता था कि वह है क्या? उसकी दशा उस बच्चे के समान थी जो रो रहा है और नहीं जानता कि उसके हृदय में कोई इच्छा है या नहीं।

"अपनी जीवन-संगिनी के हृदय के स्नेह-रिक्त स्थान को वह सुनहरे और मूल्यवान आभूषणों तथा इसी प्रकार के अन्य उपहारों से भर देना चाहता था।

"उसका चाचा दुर्गामोहन दूसरी तरह का व्यक्ति था। वह अपनी पत्नी के प्रेम को किसी भी मूल्य पर क्रय करने के पक्ष में न था और न ही वह प्रेम के विषय में चिड़चिड़े स्वभाव का था। फिर भी अपनी जीवन-संगिनी के प्रेम की प्राप्ति के लिए भाग्यशाली था।

"जिस प्रकार एक सफल दुकानदार को कहीं तक बे-लिहाज होना आवश्यक है, ठीक उसी प्रकार एक सफल पति बनने के लिए पुरुष को कहीं तक कठोर स्वभाव बन जाना भी अति आवश्यक है। सानुरोध आपको मैं यह सीख देता हूं।"

ठीक उसी समय गीदड़ों की चीख-पुकार जंगल में सुनाई दी। ऐसा ज्ञान होता था कि या तो वे उस स्कूल के अध्यापक के दाम्पत्य-जीवन के मनोविज्ञान पर घिनौना परिहास कर रहे हैं या फणीभूषण की कहानी के प्रवाह को कुछ क्षणों के लिए उस चीख-पुकार से रोक देना चाहते हैं। फिर भी बहुत जल्दी वह चीख-पुकार रुक गई और पहले से भी गहन अंधेरी और शून्यता वायुमण्डल पर छा गई, किन्तु स्कूल के अध्यापक ने पुन: कथा आरम्भ की-

"सहसा फणीभूषण के बड़े व्यवसाय में शिक्षाप्रद अवनति दृष्टिगोचर हुई। यह क्यों हुआ? इसका उत्तर मेरी बुध्दि से परे है। संक्षिप्त में यह कि कुसमय ने उसके लिए बाजार में साख रखना कठिन कर दिया। यदि किसी प्रकार कुछ दिनों के लिए वह एक बड़ी पूंजी प्राप्त करके मण्डियों में फैला सकता तो सम्भव था कि बाजार से माल को न खरीदने के तूफान से बच निकलता, किन्तु इतनी बड़ी रकम का तुरन्त प्रबन्ध खाला का घर न था। यदि स्थानीय साहूकारों से कर्ज मांगता तो अनेक प्रकार की अफवाहें फैल जातीं और उसकी साख को असहनीय हानि पहुंचती। यदि पत्र-व्यवहार से भुगतान का ढंग करता तो रुक्का या पर्चे के बिना संभव न था और इससे उसकी ख्याति को बहुत बड़ा आघात पहुंचने की सम्भावना थी। केवल एक युक्ति थी कि पत्नी के आभूषणों पर रुपया प्राप्त किया जाए और यह विचार उसके हृदय में दृढ़ हो गया।

"फणीभूषण मनीमलिका के पास गया। परन्तु वह ऐसा पति न था कि पत्नी से स्पष्ट और सबलता से कह सके। दुर्भाग्यवश उसे अपनी पत्नी से उतना घनिष्ठ प्रेम था जैसा कि उपन्यास के किसी नायक को नायिका से हो सकता है।

"सूर्य का आकर्षण पृथ्वी पर बहुत अधिक है, किन्तु अधिक प्रभावशाली नहीं। यही दशा फणीभूषण के प्रेम की थी। उस प्रेम का मनीमलिका के हृदय पर कोई प्रभाव न था। किन्तु मरता क्या न करता, आर्थिक कठिनाई की चर्चा, प्रोनोट, कर्जे का कागज, बाजार के उतार-चढ़ाव की दशा, इन सब बातों को कम्पित और अस्वाभाविक स्वर में फणीभूषण ने अपनी पत्नी को बताया। झूठे मान, असत्य विचार और भावावेश में साधारण-सी समस्या जटिल बन गई। अस्पष्ट शब्दों में विषय की गम्भीरता बता कर डरते-डरते अभागे फणीभूषण ने कहा-"तुम्हारे आभूषण!"

"मनीमलिका ने न 'हां' कही और न 'ना' और न उसके मुख से कुछ ज्ञात होता था। उस पर गहरा मौन छाया हुआ था। फणीभूषण के हृदय को गहरा आघात पहुंचा। किन्तु उसने प्रकट न होने दिया। उसमें पुरुषों का-सा वह साहस न था कि प्रत्येक

वस्तु का वह प्रतिदिन निरीक्षण करता। उसके इन्कार पर उसने किसी प्रकार की चिन्ता प्रदर्शित न की। वह ऐसे विचारों का व्यक्ति था कि प्रेम के जगत में शक्ति और आधिक्य से काम नहीं चल सकता। पत्नी की स्वीकृति के बिना वह आभूषणों को छूना भी पाप समझता था। इसलिए निराश होकर रुपये की प्राप्ति के लिए युक्तियां सोचकर कलकत्ता चला गया।"

2."पत्नी अपने पति को प्राय: जानती है, उसकी नस-नस से परिचित होती है, पर पति अपनी पत्नी के चारित्रय का इतना गम्भीर अध्ययन नहीं कर सकता। यदि पति कुछ गम्भीर व्यक्ति हो तो पत्नी के चरित्र के कुछ भाग उसकी तीक्ष्ण दृष्टि से बचाकर जान लेता है। सम्भवत: यह सत्य है कि मनीमलिका ने फणीभूषण को अच्छी तरह न समझा। एक पाश्चात्य व्यक्ति का व्यक्तित्व मूर्ख स्त्री के अन्धविश्वास- जैसे जीवन और उसकी समझबूझ से प्राय: ऊंचा होता है। वह स्वयं स्त्री की भांति एक रोमांचकारी व्यक्तित्व बनकर रह जाता है और इसी कारण पुरुष की उन दशाओं में से किसी में भी फणीभूषण को पूरी तरह सम्मिलित नहीं किया जा सकता।

"मूर्ख-अन्धा-जंगली-"

"मनीमलिका ने अपने बड़े सलाहकार मधुसूदन को बुलाया। यह दूर के रिश्ते से चचेरा भाई था और फणीभूषण के व्यापार में एक आसामी की देख-रेख पर नियुक्त था। योग्यता के कारण नहीं, बल्कि रिश्तेदारी के जोर पर वह उस आसामी पर अधिकार जमाये हुए था। काम की चतुराई के कारण नहीं, बल्कि रिश्तेदारी की धौंस में हर माह वेतन से भी अधिक रकम ले उड़ता था। मनीमलिका ने सारी रामकहानी उसके सामने वर्णन की और अन्त में पूछा-"क्या करूं, नेक सलाह दो।"

"मधु ने बुध्दिमत्त और दूरदर्शिता के ढंग से सिर हिलाकर कहा-"मेरा माथा ठनकता है, इस मामले में कुशल दिखाई नहीं देती।'

"सांसारिक बुध्दिहीन व्यक्तियों को हर कार्य में सन्देह ही दिखाई दिया करता है। उनको किसी काम में कुशल नहीं दिखाई देती।

"फणीभूषण को रुपया तो मिलने से रहा, अन्त में तुम्हें आभूषणों से भी हाथ धोने पड़ेंगे।'

"सांसारिक समस्याओं और पुरुष तथा नारी के सम्बन्ध में जो मनीमलिका के अपने व्यक्तिगत विचार थे, उनके प्रकाश में मधु के निकाले हुए परिणाम का प्रथम भाग सम्भावित और दूसरा सत्य मालूम होता था। विश्वास उसके हृदय से जाता रहा था, सन्तान उसके थी ही नहीं। बाकी रहा पति, वह किसी गिनती में ही न था। अत: उसका सम्पूर्ण ध्यान अपने आभूषणों पर केन्द्रित था। इन्हीं से उसके हृदय की प्रसन्नता थी, ये ही उसको सन्तान के समान प्रिय थे। सन्तान को मां से छीन लीजिए फिर देखिए ममता की क्या दशा होती है। यही दशा मनीमलिका की थी। उसका यह विचार था कि उसके आभूषण पति के मनसूबों की भेंट हो जायेंगे।

"फिर मुझे क्या करना चाहिए?"

"अभी मैके चली जाओ, सारे आभूषण वहां छोड़ आओ।' चालाक मधु ने कहा।

"इस प्रकार उसकी हांडी को भी बघार लगता है। यदि सारे नहीं तो कुछ आभूषण मधु को अपने हत्थे चढ़ने की भी आशा थी। मनीमलिका उसी समय सहमत हो गई।

बढ़ते हुए अन्धकार से स्कूल के अध्यापक पर भी गम्भीरता छा गई थी, किन्तु कुछ क्षणों के पश्चात् उसने फिर वर्णन आरम्भ किया-

'3.'झुटपुटे के समय जबकि सावन की घटाएं आकाश पर डेरा जमाए हुए थीं वर्षा मूसलाधर हो रही थी, एक नौका ने रेतीली सीढ़ियों पर लंगर डाला। दूसरे दिन प्रात: घटाटोप अंधेरे में मनीमलिका आई और एक मोटी चादर में सिर से पांव तक लिपटी हुई नौका पर सवार हो गई!

"मधु जो रात से उसी नौका में सोया हुआ था, उसकी आहट से जाग गया।

" 'आभूषणों की सन्दूकची मुझे दे दो; ताकि सुरक्षित रख लूं।'

" 'अभी ठहरो जल्दी क्या है? चलो तो सही, आगे देखा जायेगा।'

"नौका का लंगर उठा और वह फुंकारती हुई नदी की लहरों से जूझने लगी। मनीमलिका ने सारे आभूषण एक-एक करके पहन लिये थे। सन्दूक में बन्द करके ले जाना असुरक्षित मालूम होता था। मधु हक्का-बक्का रह गया, जब उसने देखा कि मनी के पास सन्दूकची नहीं है। उसको इसकी कल्पना भी न थी कि उसने आभूषणों को अपने प्राणों से लगा रखा है।

"चाहे मनीमलिका ने फणीभूषण को न समझा था किन्तु मधु के चरित्र का एक बहुत ही ठीक अन्दाजा लगाया था।

"जाने से पहले मधु ने फणीभूषण के एक विश्वासी मुनीम को लिख भेजा था कि मैं मनीमलिका के साथ उसको मैके पहुंचाने जा रहा हूँ। यह मुनीम दुनिया का अनुभवी और बड़ी आयु का था और फणीभूषण के पिता के समय से ही उसके साथ था। उसको मनीमलिका के जाने से बहुत चिन्ता और सन्देह हुआ। उसने अपने मालिक को फौरन लिखा। वफादारी और खैरख्वाही ने उसे प्रेरणा दी और अपने पत्र में अपने मालिक को खूब खरी-खरी सुनाई। पति की लाज और दूरदर्शिता दोनों का यह अर्थ नहीं है कि पत्नी को इस प्रकार स्वतन्त्र छोड़ दिया जाये। मनीमलिका के हृदय के सन्देह को फणीभूषण समझ गया। उसे अत्यन्त दु:ख हुआ। वह इस संबंध में एक शब्द भी शिकायत का जबान पर न लाया। अपमान और कष्ट सहे, किन्तु उसने मनीमलिका पर कोई दबाव डालना उचित न समझा; किन्तु फिर भी इतना अविश्वास! वर्षों से वह मेरे एकान्त की और सांसारिक साथी रही है। आश्चर्य है कि उसने मुझे तनिक भी न समझा।

"इस मौके पर कोई और होता तो क्रोधावेश में न जाने क्या कर बैठता, किन्तु फणीभूषण मौन था और दु:ख प्रकट करके मनीमलिका को दुखित करना उचित न समझता था।

"पुरुष को चाहिए कि वह दावानल की भांति जरा-जरा-सी बात पर भड़क जाए। जिस प्रकार स्त्री सावन के बादलों की भांति बात-बात पर आंसुओं की झड़ी लगा देती है। किन्तु अब वह पहले-से दिन कहां?

फणीभूषण ने मनीमलिका को उसकी अनुपस्थिति में बिना सूचना दिए जाने के विषय में कोई डांट-फटकार का पत्र न लिखा। बल्कि यह निश्चय कर लिया कि मरते दम तक उसके आभूषणों का नाम तक जबान पर न लायेगा। रुपये की वसूली में फणीभूषण सफल हो गया। उसके व्यापारिक रास्ते खुल गये। दस दिन के पश्चात् वह अपने घर को वापस चला, इस विचार को लिये हुए कि आभूषण मैके में छोड़कर मनीमलिका घर को वापस आ गई होगी।

"दस दिन पहले का तुच्छ और असफल प्रश्न का उत्तर जब मस्तानी चाल से घर में कदम रखेगा और पत्नी की दृष्टि उसकी सफलता से दमकते हुए मुख पर पड़ेगी, तो वह अपने इन्कार पर स्वयं लज्जित होगी और अपनी नादानी पर पश्चाताप प्रकट

करेगी। इन विचारों में मग्न फणीभूषण शयन-कक्ष में पहुंचा। परन्तु द्वार पर ताला लगा हुआ था। ताला तुड़वाकर अन्दर घुसा तो तिजोरी के किवाड़ खुले पड़े थे।

"इस आघात से वह लड़खड़ा गया- "शुभ चिन्ता और प्रेम' उस समय उसके पास निरर्थक और अस्पष्ट शब्द थे। सोने का पिंजरा, जिसकी प्रत्येक सुनहरी तीली को उसने अपने प्राण और आन का मूल्य देकर प्राप्त किया था, टूट चुका था और खाली पड़ा था। वह अब दिवालिया था और सिवाय गहरी उसांस, आंसू और हृदय की टीस के अतिरिक्त उसके पास कुछ न था।

"मनीमलिका को बुलाने का ध्यान भी उसके हृदय में न आया। उसने यह निश्चय कर लिया कि वह अब चाहे आए या न आए, किन्तु वृध्द मुनीम इस निश्चय के विरुध्द था। वह अनुरोध कर रहा था कि कम-से-कम कुशल-क्षेम अवश्य मंगानी चाहिए। इतनी देरी का कोई कारण समझ में नहीं आता। उसके अनुरोध से विवश होकर मनीमलिका के मैके को आदमी भेजा गया। किन्तु वह यह अशुभ समाचार लाया कि न यहां मनीमलिका आई है न मधु।

"यह सुना तो पांव-तले की जमीन निकल गई। नदी-पार आदमी दौड़ाये गये। खोज और प्रयत्न में किसी प्रकार की कमी न रखी। किन्तु पता न चलना था, न चला। यह भी मालूम न हो सका कि नौका किस दिशा में गई है और नौका का नाविक कौन था।

"निराश फणीभूषण हृदय मसोसकर बैठ गया।"

'4.'कृष्ण-जन्माष्टमी की संध्या थी। वर्षा हो रही थी। फणीभूषण शयनकक्ष में अकेला था। गांव में एक व्यक्ति भी बाकी न था। जन्माष्टमी के मेले ने गांव-का-गांव सूना कर दिया था। मेले की चहल-पहल और महाभारत के नाटक के शौक ने बच्चे से लेकर बूढ़े तक को खींच लिया था। शयन-कक्ष की खिड़की का एक किवाड़ बन्द था। फणीभूषण दीन-दुनिया से बेखबर बैठा था।

"संध्या का झुटपुटा रात्रि के गहन अंधेरे में परिवर्तित हो गया। किन्तु इस भयावने अंधेरे, मूसलाधर वर्षा और ठंडी वायु का उसको ध्यान भी न था। दूर से गाने की मधुर ध्वनि से उसकी श्रवण-शक्ति सर्वथा बेसुध थी।

"दीवार पर विष्णु और लक्ष्मी के चित्र लगे हुए थे। फर्श साफ था और प्रत्येक वस्तु उपयुक्त स्थान पर रखी हुई थी।

"पलंग के समीप एक खूंटी पर एक सुन्दर और आकर्षक साड़ी लटकी हुई थी। सिरहाने एक छोटी-सी मेज पर पान का बीड़ा स्वयं मनीमलिका के हाथ का बना हुआ रखा-रखा सूख चुका था।

"विभिन्न वस्तुएं सलीके से अपने-अपने स्थान पर रखी हुई थीं। एक ताक में मनीमलिका का प्रिय लैम्प रखा हुआ था। जिसको वह अपने हाथ से प्रकाशित किया करती थी और जो उसकी अन्तिम विदाई का स्मरण करा रहा था। मनी की स्मृति में इन सम्पूर्ण वस्तुओं का मौन-रुदन उस कमरे को कामना का शोक-स्थल बनाए हुए था। फणीभूषण का हृदय स्वत: कह रहा था-"प्यारी मनी, आओ और अपने प्राणमय सौन्दर्य से इन सब में प्राण फूंक दो।'

"कहीं आधी रात के लगभग जाकर बूंदों की तड़तड़ थमी। किन्तु फणीभूषण उसी विचार में खोया बैठा था।

"अंधेरी रात के असीमित धुंधले वायुमण्डल पर मृत्यु की राजधनी का सिक्का चल रहा था। फणीभूषण की दुखित आत्मा का रुग्ण स्वर इतना पीड़ामय था कि यदि मृत्यु की नींद सोने वाली मनीमलिका भी सुन पाये तो एक बार नेत्र खोल दे और अपने सोने के आभूषण पहने हुए उस अंधेरे में ऐसी प्रकट हो जैसे कसौटी के कठोर पत्थर पर किंचित सुनहरी रेखा।

5."सहसा फणीभूषण के कान में किसी के पैरों की-सी आहट सुनाई दी। ऐसा मालूम होता था कि नदी-तट से वह उस घर की ओर वापस आ रही है। नदी की काली लहरें रात की अंधेरी में मालूम न होती थीं। आशा की प्रसन्नता ने उसे जीवित कर दिया। उसके नेत्र चमक उठे। उसने अंधकार के पर्दे को फाड़ना चाहा, किन्तु व्यर्थ। जितना अधिक वह नेत्र फाड़कर देखता था, अंधकार के पर्दे और अधिक गहन होते जाते थे और यह मालूम होता था कि प्रकृति इस भयावनी अन्धेरी में मनुष्य के हस्तक्षेप के विरुध्द विद्रोह कर रही है। आवाज समीप में समीपतर होती गई। यहां तक कि सीढ़ियों पर चढ़ी और सामने द्वार पर आकर रुक गई; जिस पर ताला लगा हुआ था। द्वारपाल भी मेले में गया था। द्वार पर धीमी-सी-खुट-खुट सुनाई दी। ऐसी जैसी आभूषणों से सुसज्जित स्त्री का हाथ द्वार खटखटा रहा हो। फणीभूषण सहन न कर सका। जीने से उतरकर बरामदे से होता हुआ द्वार पर पहुंचा। ताला बाहर से लगा हुआ था। सम्पूर्ण शक्ति से उसने द्वार हिलाया। शोर-गुल से उसका सपना टूटा तो वहां कुछ न था।

"वह पसीने में सराबोर था, हाथ-पांव ठंडे हुए थे। उसका हृदय टिमटिमाते हुए दीपक के अन्तिम प्रकाश की भांति जलकर बुझने को तैयार था।

"वर्षा की तड़तड़ ध्वनि के सिवाय कुछ भी सुनाई न देता था।

"फणीभूषण से यह 'वास्तविकता' किंचित मात्र भी विस्मृत न हुई थी कि उसकी अधूरी इच्छाएं पूरी होते-होते रह गईं।

"6.दूसरी रात को फिर नाटक होने वाला था, नौकर ने आज्ञा चाही तो चेतावनी दे दी कि बाहर का द्वार खुला रहे।

"यह कैसे हो सकता है। विभिन्न स्वभाव के व्यक्ति बाहर से मेले में आये हुए हैं, दुर्घटना का सन्देह है।' नौकर ने कहा।

" 'नहीं, तुम जरूर खुला रखो।'

" 'तो फिर मैं मेले नहीं जाऊंगा।'

" 'तुम अवश्य जाओ।'

"नौकर आश्चर्य में था कि आखिर उनका आशय क्या है?

"जब संध्या हो गई और चहुंओर अन्धकार छा गया तो फणीभूषण उस खिड़की में आ बैठा। आकाश पर गहरा कोहरा छाया हुआ था, घनघोर घटाएं ऐसी तुली खड़ी थीं कि जल-थल एक कर दें, चहुंओर शून्यता का राज्य था। ऐसा मालूम होता था कि सारे संसार का वायुमण्डल मौन भाव से किसी मधुर ध्वनि को सुनने के लिए अपने कान लगाये हुए है। मेढकों की निरन्तर टर्र-टर्र और ग्रामीण स्वांगों की कम्पित ध्वनि भी उस शून्यता में बाधक न मालूम होती थी।

"आधी रात के लगभग फिर सम्पूर्ण शोर, चहल-पहल रात्रि के मौन में सोने लगा। रात ने अपने काले वस्त्रों पर एक और काला आवरण डाल लिया। पहली रात की भांति फणीभूषण को फिर वही आवाज सुनाई दी। उसने नदी की ओर दृष्टि उठाकर भी न देखा। ईश्वर न करे कि कोई अनाधिकार-चेष्टा द्वारा समय से पूर्व ही उसकी आकांक्षाओं का खून कर दे। वह मूर्तिवत बैठा रहा जैसे किसी ने लकड़ी की प्रतिमा को बनाकर सरेश से कुर्सी पर चिपका दिया हो।

"पंजों की आहट सुनसान घाट की सीढ़ियों की ओर से आकर मुख्य द्वार में प्रविष्ट हुई। चक्कर वाले जीने की सीढ़ियों पर चढ़कर अन्दर के कमरे की ओर बढ़ी। लहरों की प्रतिस्पर्धा में अपने नौका को देखा होगा। इसी प्रकार फणीभूषण का हृदय बल्लियों उछलने लगा। वह आवाज बरामदे से होती हुई शयनकक्ष की ओर आई और ठीक द्वार पर आकर ठहर गई। अब केवल द्वार-प्रवेश करना शेष था।

फणीभूषण की आकांक्षाएं मचल उठीं। संतोष का आंचल हाथ से जाता रहा, वह सहसा कुर्सी से उछल पड़ा। एक दु:खभरी चीख-'मनी' उसके मुख से निकली, किन्तु दु:ख है कि उसके पश्चात् मेंढकों की आवाज और वर्षा की बड़ी-बड़ी बूंदों की तड़तड़ के सिवा और कुछ न था।

7."दूसरे दिन मेला छंटने लगा, दुकानें आरम्भ हो गईं; दर्शक अपने-अपने घरों को वापस जाने लगे। मेले की शोभा समाप्त हो गई।

"फणीभूषण ने दिन में व्रत रखा और सब नौकरों को आज्ञा दे दी कि आज रात को कोई भी व्यक्ति न रहे। नौकरों का विचार था कि हमारे मालिक आज किसी विशेष मंत्र का जाप करेंगे।

"संध्या-समय जब कहीं भी आकाश की टुकड़ियों पर बादल न थे वर्षा से धुले हुए वायुमंडल से सितारे चमकने लगे थे, पूर्णिमा का चांद निकला हुआ था, वायु भी मंद-मंद बह रही थी, मेले से लौटे हुए दर्शक अपनी थकान उतार रहे थे वे बेसुध हुए सो रहे थे और नदी पर कोई नौका दिखाई न देती थी।

"फणीभूषण उसी खिड़की में आ बैठा और तकिये से सिर लगाकर आकाश की ओर ध्यान से देखने लगा। उसको उस समय वह समय याद आया जब वह कालेज में शिक्षा प्राप्त कर रहा था। संध्या-समय चौक में लेटकर अपनी भुजा पर सिर रखकर झिलमिलाते हुए सितारों को देखकर मनीमलिका की सुन्दर कल्पना में खो जाया करता था। उन दिनों कुछ समय का बिछोह मिलन की आशाओं को अपने आंचल में लिये बहुत ही प्रिय मालूम हुआ करता था; परन्तु वह सब-कुछ अब 'स्वप्न' मालूम होता था।

"सितारे आकाश से ओझल होने लगे, अन्धकार ने दांये-बांये और नीचे-ऊपर सब ओर से पर्दे डालने आरम्भ कर दिये और ये पर्दे आंख की पलकों की भांति परस्पर मिल गये। संसार स्वप्नमय हो गया।

"किन्तु आज फणीभूषण पर एक विशेष प्रकार का प्रभाव-सा था। वह अनुभव कर रहा था कि उसकी आशाओं के पूर्ण होने का समय समीप है।

"पिछली रातों की भांति किसी के पांवों की आहट फिर स्नान-घाट की सीढ़ियों पर चढ़ने लगी, फणीभूषण ने आंखें बन्द कर लीं और विचारों में निमग्न हो गया। पांव की आहट मुख्य द्वार से प्रविष्ट होकर सम्पूर्ण मकान में होती हुई शयनकक्ष के द्वार पर आकर विलीन हो गई। फणीभूषण का सम्पूर्ण शरीर कांपने लगा; परन्तु वह दृढ़ निश्चय कर चुका था कि अन्त तक आंखें न खोलेगा। आहट कमरे में प्रविष्ट हुई, खूंटी पर की साड़ी, ताक के लैम्प, खुले हुए पानदान और अन्य वस्तुओं के पास थोड़ी-थोड़ी देर ठहरी और अन्त में फणीभूषण की कुर्सी की ओर बढ़ी।

"अब फणीभूषण ने आंखें खोल दीं। धीमी-धीमी चांदनी खिड़की से आ रही थी। उसकी दृष्टि के सामने एक ढांचा, एक हड्डियों का पंजर खड़ा था। उसने रोम-रोम में छल, कलाइयों में कड़े, गले में माला। सारांश यह कि प्रत्येक जोड़ जड़ाऊ आभूषणों से दमक रहा था। सम्पूर्ण आभूषण ढीले होने के कारण निकले पड़ते थे। नेत्र वैसे ही बड़े-बड़े और चमकीले, परन्तु प्रेम-भावना से रिक्त थे। अठारह वर्ष पूर्व विवाह की रात को शहनाइयों के मधुर स्वरों में इन्हीं मोहिनी आंखों से मनीमलिका ने फणीभूषण को पहली बार देखा था। आज वही आंखें वर्षा की भींगी चांदनी में उसके मुख पर जमी हुई थी।

"पंजर ने दायें हाथ से संकेत किया। फणीभूषण स्वयं चल पड़ने वाली मशीन की भांति उठा और पंजर के पीछे-पीछे हो लिया। हर कदम पर उसकी हड्डियां चटख रही थीं, आभूषण झंकृत हो रहे थे। वे बरामदे से होते हुए, सीढ़ियों के नीचे उतरे और उसी पथ पर हो लिये जो स्नान-घाट पर जाता था। अंधेरे में जुगनू कभी-कभी चमक उठते थे। मध्दम धीमी चांदनी वृक्षों के गहन पत्तों में से निकलने के लिए प्रयत्नशील थी।

"वे दोनों नदी के तट पर पहुँचे। पंजर ने सीढ़ियों से नीचे उतरना आरम्भ किया। जल पर चांदनी का प्रतिबिम्ब नदी की लहरों से क्रीड़ा कर रहा था। पंजर नदी में कूद पड़ा, उसके पीछे फणीभूषण का पांव भी नदी में गया। उसकी स्वप्न की छलना टूटी तो वहां कोई न था, केवल वृक्षों की एक पंक्ति चौकीदारी कर रही थी।

"अब फणीभूषण के सम्पूर्ण शरीर पर कम्पन छाया हुआ था। फणीभूषण भी एक अच्छा तैराक था, किन्तु अब उसके हाथ-पांव बस में न थे। दूसरे ही क्षण वह नदी के अथाह जल की तह में जा चुका था।"

इस दर्द से भरे हुए अन्त पर स्कूल के अध्यापक ने कक्षा को समाप्त किया। उसकी समाप्ति पर हमें फिर एक बार शून्य वायुमंडल का अनुभव हुआ। मैं भी मौन था। अंधेरे में मेरे मुख के विचारों का अध्ययन वह न कर सकता था।

"क्या आप इसको कहानी कहते हैं?" उसने संदेह की मुद्रा में पूछा।

"नहीं! मैं तो इसे सत्य नहीं समझता, प्रथम तो इसका कारण है कि मेरी प्रकृति उपन्यास और कहानी-लेखन से ऊंची है। और दूसरा कारण यह है कि मैं ही फणीभूषण हूं।" मैंने बात को काटकर कहा।

स्कूल का अध्यापक अधिक व्याकुल नहीं था।

"किन्तु आपकी पत्नी का नाम**?"** उसने पूछा।**"**नरवदा काली।**"**

https://www.hindiadda.com/khoya-hua-motee/